ISSN: 2249-894X IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) VOLUME - 6 | ISSUE - 11 | AUGUST - 2017

REVIEW OF RESEARCH

रामधारी सिंह दिनकर के साहित्य में राष्ट्र चेतना

अमरनाथ शर्मा
हिन्दी विभाग, आर.बी.एस. महाविद्यालय, तियाई.

प्रस्तावना :

दिनकर के साहित्य में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और भौगोलिक चेतना की बारीक व सशक्त अभिव्यक्ति सघनता से पिरोई गई है। उन्होंने अपनी रचनाशीलता में ओजस्विता, गतिशीलता, गीतोन्मुख्ता, विद्रोह के स्वर, मंगल भावना, विवेक की संयुक्तिपूर्णता के साथ ही जनतांत्रिक सरोकारों को बेहद प्रमुखता से उकेरा है। जिसकी अनुगूंज आज की पीढ़ी को भी आहलादित किए हुए है। हिंदी साहित्य में गुप्तजी के सच्चे उत्तराधिकारी के तौर पर आलोचकों ने रामधारी सिंह दिनकर को निरूपित किया है। दोनों के सर्जना में राष्ट्रीयता की सम्यक, प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति की प्रतिच्छाया परिलक्षित होती है। दिनकर को समसामयिक परिस्थितियों से उठे विक्षोभ ने राष्ट्रीयतावादी कवि के तौर पर विख्यात करने में अहम भूमिका निभाई। राष्ट्रीय भावधारा से ओतप्रोत सभी काव्य धाराआ का एक मात्र लक्ष्य देश को गुलामी से आजादी की तरफ ले जाना था। इसी भावना के तहत प्रत्येक लेखक ने अपनी रचना के माध्यम से राष्ट्र प्रेम को प्राथमिकता दी। वैसे तो समस्त आधुनिक साहित्य का संबंध राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम से रहा है। उस दौर में राष्ट्रीय कवि के तौर पर मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, सुभद्रा कुमारी चौहान आखिर में रामधारी सिह दिनकर का नाम आता है। दिनकर अपनी कृति 'संस्कृति के चार अध्याय' में स्पष्ट लिखते हैं कि श्भारतीय संस्कृति में चार बड़ी क्रांतियां हुई हैं और हमारी संस्कृति का इतिहास उन्हीं चार क्रांतियों का इतिहास है।' यह बात आज भी सटीक है। समय के साथ समीचीन है। साहित्य और संस्कृति के दम पर ही किसी भी देश का सम्यक मूल्यांकन किया जाता रहा है। आज भी भारत की नवयुवा पीढ़ी अपने अतीत में झांकने के बाद ही अपने भविष्य की नींव रखने को तत्पर होती ळें

'कह दे शंकर से, आज करें, वे प्रलय नृत्य फिर एक बार,
सारे भारत में गूंज उठे, हर–हर बम का फिर मंत्रोच्चार।'

रामधारी सिंह दिनकर ने अपने शुरुआती दौर में विद्रोही रचनाओं के साथ ही साहित्य में धमक बनाई थी। जोश से परिपूर्ण रचनाओं के माध्यम से भारतीय जनमानस में एक अलग ही अलख जगाने का प्रयास किया जिसमें वह काफी हद तक सफल भी रहे। देश को समर्पित साहित्य सृजित करने की शुरुआत मैथिली शरण गुप्तजी ने की थी। जिसकी थाती और लाठी दोनों की मुठिया पकड़कर दिनकर ने साहित्य में एक अलग ही तरह ने बिम्ब गढ़ने शुरू किए। रचनाओं के कद्र में ऐतिहासिक, पौराणिक और वैदिक काल के चर्चित पात्रों के माध्यम से मौजूदा वक्त की नब्ज पर गहरी चोट की है जिसकी काव्यमयी ध्वनि आज तक सामाजिक, वैयक्तिक पटल पर गुंजायमान है। बालकृष्ण शर्मा नवीन से अलग अपनी सर्जना को बनाए रखा। जोश की वाणी, यथार्थ की कहानी, व्यक्ति का दर्द, समय से लोहा लेने का हुनर, जमीं से फलक तक अपनी जीवट जिद की कथा कहने के माहिर दिनकर लिखते हैं –

युद्ध को निन्द्य कहते हो मगर / जब तलक हैं उठ रही चिनगारियां
भिन्न स्वार्थों के कुलिश–संघर्ष / की युद्ध तब तक विश्व में अनिवार्य है।
व्यक्ति का है धर्म तप, करुणा, क्षमा / व्यक्ति को शोभा विनय भी, त्याग भी
किंतु उठता प्रश्न जब समुदाय का / भूलना पडता हमें तप–त्याग को।

अपनी रचनाओं की पगडडियों को थामकर 'रेणुका' में रोमानी व राष्ट्रीय भावाबोध के द्वारा कदम आगे बढ़ाते हैं वहीं 'उर्वशी' में 'कामाध्यात्म' का प्रक्षेपण करते हुए पुरुरवा– उर्वशी की पौराणिक जीवन गाथा के वितान में प्रवेश करके नारी जीवन से जुड़े प्रश्नों पर विचार करते हैं जिसकी लहक आज के स्त्री विमर्श के साहित्यिक जगत में गहरी ठसक बनती जा रही है। जबकि 'हुंकार' में कवि अधिक व्यग्र, सजग, विद्रोही और सतर्कता के साथ सामने आता है जिसकी प्रतिच्छाया आज भी समाज के धुंधलाते चेहरे पर एक तेज छोड़ने सरीखी है।

'यही लग्न है वह जब नारी, जो चाहे, वह पा ले
उडुपों की मेखला, कौमुदी का दुकुल मंगवा ले।'
तपोनिष्ठ नर का संचित तप और ज्ञान ज्ञानी का,
मानशील का मान, गर्व गर्वाले, अभिमानी का,
सब चढ़ जाते भेंट, सहज ही, प्रमाद के चरणों पर
कुछ भी बचा नहीं पाता नारी स उद्वेलित नर
किंतु हाय, यह उद्वेलन भी कितना मायामय है!
उठता धधक सहज जितनी आतुरता से पुरुष हृदय
उस आतुरता से न ज्वार आता नारी के मन में,
रखना चाहती वह समेट कर सागर को बंधन में।'

उपर्युक्त पंक्तियों के भाव और संदर्भ आज के सामाजिक विमर्शमय परिवेश में काफो हद तक सटीक बैठता है। आज स्त्री इतनी सतर्क हो चुकी है कि वह हर संवेदना, हर मनोभाव व व्यक्ति को अपनी समझ की कसौटी पर कसने लगी है तत्पश्चात निर्णय की मेखला को खोलने का यत्न करने लगी है। कहने का तात्पर्य है कि जब दिनकर जी ने लिखा था तब से अब तक एक लंबा वक्त गुजूर चुका है बावजूद उनकी अभिव्यक्ति प्रासंगिक बनी हुई है। अपनी 'रसवन्ती' रचना के माध्यम से लेखक एक उद्दात भूमि पर विचारशील मुद्रा में खड़े होकर तेज आवाज में बहरी होती जा रही व्यवस्था के कान में एक ऐसी चीख उड़ेलते हैं जिससे समय शिखर पर बैठा बहरुपिया चौंक जाता है जैसे आज के बदले हालात में मासूम की आवाज बाहर की बजाय कमरों तक सिमट जाती है लेकिन धीरे–धीरे वह समाज को झकझोरने में सक्षम होती है।

'थी व्यथा किसे प्रिये? कौन मोल/करना आखों के पानी का?
नयनों को था अज्ञात अर्थ/तब तक नयनों की वाणी का।'

संसार के समस्त नर–नारी एक समान सुखद जीवन की नाव खे सकते हैं बशर्त समय की धार में बहने की बजाय अपने बाजुओं के हुनर पर भरोसा व ताकत बनाए रखें।

'सब हो सकते हैं तुष्ट एक साथ्सब सुख पा सकते हैं
चाहें तो पल में धरती कीधस्वर्ग बना सकते हैं।'

'हिमालय के प्रति' रचना के द्वारा देशवासियों के हृदय में राष्ट्र भावना की हुकार भरने का अथक प्रयत्न किया है। खुले मन से देश भावना को उद्धत किया है। हर प्राणी से एक गुहार लगाते हैं। जिससे सोये मानवों के हृदय में एक जोश की लहर उठे जहां से समाजहित में नया सोता फूटे।

'मेर नगपति! मेरे विशाल! साकार, दिव्य, गौरव विराट,
पौरुष के पूंजीभूत ज्वाल मेरी जननी के हिम–किरीट,
मेरे भारत के दिव्य भाल।'

इंसान अगर एक बार हृदय से ठान ले कि वह यह करके रहेगा तो उसे कोई रोक नहीं सकता है। दिनकर की संपूर्ण रचना में 'मानवतावादी' स्वर मुखरित हैं। उन्होंने व्यक्ति की मुक्ति की अपेक्षा सामाजिक प्रवृत्ति की उपादेयता एवं सामाजिक समता को अधिक प्राथमिकता दी है। विपदाओं, कष्टों, अभावों व विगत जीवन के कर्मों का फल मानकर हाथ पर हाथ धरकर बैठने की बजाय संघर्षरत मानव को अधिक मूल्यवान माना है। उसी परिप्रेक्ष्य में अपने उद्‌गार व्यक्त किए हैं। उन्होंने किसी वीराने में बैठकर सुबकने की बजाय यथार्थ से लोहा लेने वालों की जीत होती है विषय पर अधिक बल दिया है। अपने पुरुषार्थ के दमपर मनुष्य कुछ भी हासिल कर सकता है। किसी भी राष्ट्र रूपी वट के तले अनेकानेक पंथ, धर्म, समुदाय, भाषा, बोली, अनुयायी आराम से पल्लवित व पुष्पित हो सकते हैं। बस उस दिशा में सही और बेहतर कदम उठाने की जरूरत है। संघर्ष और पुरुषार्थ से हासिल किया हुआ सुख सौभाग्य आजीवन सकारात्मक अनुभूतियों से भर देता है। दिनकर जी लिखते हैं कि–

'छिपा दिये सब तत्व आवरण के नीचे ईश्वर ने
संघर्षों से खोज निकाला उन्हें उद्यमी नर ने
ब्रह्मा से कुछ लिखा भाग्य में मनुज नहीं लाया है
अपना सुख उसने अपने, भुजबल से ही पाया है
प्रकृति नहीं डरकर झुकती है कभी–कभी भाग्य के बल से
सदा हारती वह मनुष्य के उद्धम से, श्रम जल से।'

उपर्युक्त के आलोक में मौजूदा वक्त की बात करें तो यह शब्द से शब्द सटीक बैठते हैं। जिस–जिस ने संघर्ष का दामन थामकर आगे बढ़ने का यत्न किया है वह अपने मार्ग में आगे बढ़े हैं। लाख अड़चनें व बाधाएं आई लेकिन विचलित हुए बगैर आगे बढ़ने वालों के सामने प्रकृति ने एक नया पथ आलोकित करने के लिए सदैव एक द्वार खोल दिया है।

गौरतलब है कि 'दिनकर' के साहित्य में प्रतिभा और विद्वतापूर्ण वर्णन किसी खास वर्ग, सीमा या व्यक्ति विशेष तक सीमित नहीं है बल्कि उसका फलक बहुत ही विस्तार लिए हुए है। तुलनात्मक रूप में अध्ययन किया जाये तो इनके साहित्य में अपने दौर के लेखकों की अपेक्षा परिमाण व गुणों में विपुल और महान होने के साथ–साथ अलहदा स्वरूप दिखाई देता है। गहन अध्ययन से पता चलता है कि दिनकर की रचनाओं में देशहित, समाजहित, व्यक्तिहित, प्रकृतिहित और सांस्कृतिक व पौराणिक धरोहरों के हित हेतु लिखा गया एक अतुलनीय सृजनात्मकता का आश्वादन मिलता है। उनकी रचनाओं में मौजूद सूक्ष्म भाव कुछ इस तरह से निरीक्षण के तौर पर देखे जा सकते हैं।

अतीत के प्रति गहरा अनुराग (रेणुका), दीनता और विपन्नता के प्रति दया (हुकार), कवि सौंदर्य का प्रेमी (रसवन्ती), बिम्ब, प्रतीक के नए अवतार (रश्मिरथी), अंतर्जगत और बाह्य–जगत का द्वंद (द्वदगीत), क्रांति से शांति की ओर प्रस्थान (सामधेनी),जीवन क चराचर मूल्यों, धरोहरों, संस्कृतियों के संचयन की थाती (संस्कृति के चार अध्याय), स्त्री जीवन का समूह बयान (उर्वशी)

अंततः कह सकते हैं कि दिनकर ने भले ही घटना विशेष रामायण, महाभारत कालीन से लिया है लेकिन उसका वर्णन व प्रतिष्ठापना आधुनिक राष्ट्रीयतावाद के तौर पर की है। कोलाहल, हलचल, विमर्श, गहन पीड़ा की समझ, इंसान का इंसान के प्रति रवैया, बोधात्मक कसौटी की शुरुआत और पुनरुत्थानवादी सोच के साथ सामंजस्य बिठाते हुए समस्त मानवजाति को अंदर व बाहर से झकझोरने का सफल प्रयास किया।

'क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसको पास गर्ल हो
उसको क्या जो दंतहीन, विषहीन, विनीत, सरल हो।'

'रश्मिरथी' को माध्यम से समाज में व्याप्त भेदभाव पर गहरी चोट की है। आज के शैक्षणिक वातावरण में एक अलग ही समाज देखने को मिल रहा है। इस बदले दौर में दिनकर की गहराई तक चुभती पंक्तियां अविस्मरणीय हैं।

संदर्भ :

1.आजकल– अक्टूबर–2008
2..कुरूक्षेत्र– जूलाई– 2007